PRINTED MATTER

To _____

_____

_____

From

SANTASAROVAR,
Mount Abu (Raj.)

Rajasthan Printers, Jodhpur.

संवित्

स्फुलिंग

संवित् साधनायन का विमर्श-पत्र

4

वैचारिक प्रसारणार्थ
मानसरोवर, आबू पर्वत

शिशिर कण
विक्रम २०३२

त्रिधाम

सूर्य का ध्यान

रक्ताब्जयुग्मा भयदानहस्तं
केयूरहाराङ्गदभूषणाढ्यम् ।
माणिक्य मौलिं दिननाथमीडे
बन्धूककान्ति विलसत्त्रिनेत्रम् ।।

भगवान सूर्य का श्रीविग्रह बन्धूकपुष्प सदृश रक्तवर्ण का है। उनका मुखमंडल तीन नेत्र से शोभित है और मस्तक माणिक्य जटित मुकुट से। केयूर-हार-अंगद आदि भूषणों से वे अलंकृत हैं। ऊर्ध्व दो पाणि में दो रक्त कमल तथा दो हस्तों में वर तथा अभय मुद्राओं को धारण किये हुये हैं। ऐसे दिनाथ का मैं भजन करता हूँ।

*

नमो विश्वप्रबोधाय नमो भ्राजिष्णुजिष्णवे ।
ज्योतिषे च नमस्तुभ्य ज्ञानार्काय नमो नमः ।।

विश्व को प्रबोधित करने वाले, समस्त प्रकाशों को जीतने वाले प्रचण्ड तेजस्वी, चैतन्य ज्योतिस्वरूप, ज्ञानमय सूर्य को बारंबार नमस्कार है।

* * *

पतझर

एक एक कर झर गए,
अपने ही घर गए—
फल. फूल, पात ।
हवाओं में विदागान घुल गया,
आकाश अधिक खुल गया—
कहने एक बात ।
छायाएँ सिमट गईं,
धूप अति निकट हुई—
करने आत्मसात ।
मन उपवन बिखर गया,
मैं में मैं उतर गया—
चला ध्यान वात ।

* * *

सदाचारानुसन्धानम्

अत्यन्तमलिनोदेहो देही चात्यन्तनिर्मलः ।
असंगोहमितिज्ञात्वा शौच मेतत् प्रचक्षते ॥ ३ ॥

मन्मनो मीनवन्नित्यं क्रीडत्यानन्द वारिधौ ।
सुस्नातस्तेन पूतात्मा सम्यग–विज्ञान वारिणा ॥ ४ ॥

देह अत्यन्तमलीन है देह प्रकाशक आत्मा निर्मल है । मैं, शरीर के होते हुए भी लिप्त नहीं, असंग हूँ । ऐसा जानकर तदनुसार भावना करना शौच कहलाता है ।

[illegible] आनन्द सागर में मीन की भाँति नित्य क्रीडारत है । उस [illegible] से भली भाँति स्नान किये हुए, मै पूतात्मा हूँ ।

*

[illegible] का प्रथम सोपान है प्रातः स्मरण, द्वितीय सोपान है शौच । [illegible] शौच कहते हैं—मल–परित्याग पूर्वक शारीरिक शुद्धि । इसके लिये [illegible] एवं जल से प्राक्षालन या स्नान पर्याप्त है । "मृज्जलाभ्यां शौचः" [illegible] मलीन है फिर शरीर शुद्धि की बात क्यों ? "शौचात् स्वांग [illegible]" ([illegible] सूत्र) । शरीर की आत्यन्तिक मलीनता और शरीरस्थ [illegible] आत्यन्तिक निर्मलता के उपरान्त शौच की आवश्यकता क्यों ? यदि [illegible] है तो उसका स्वरूप क्या हो ?

[illegible] शौच का संकेत विजातीय एवं मलरूप चिन्तन के त्याग से है । वह [illegible] क्या है जिससे मुक्त होने का उपाय 'मैं असंग हूँ' कहा गया ।

[illegible]णीय है, अहं किस ओर उन्मुख है, देहकी ओर या स्वयं की ओर । [illegible] भी [illegible] है, देवालय है, ब्रह्मपुरी है । पर यह ज्ञानी ही जानता है और [illegible] से ज्ञात हो सकता है, अन्यथा नहीं ।

स्फारब्रह्म जलाम्बोधौ–फेना सर्वेकुलाचलाः ।
चिदादित्य महातेजः मृगतृष्णा जगच्छ्रियः ॥

[illegible] न सूर्य में है न मरूभूमि में । वह तो प्रतीती में है । उसी भाँति [illegible] भी प्रतीती में है । द्रष्ट चैतन्य सूर्य की प्रभा में हजारों कल्पनायें [illegible] में मिल–मिलकर मिट जाती हैं । यदि जगत को देखते हुए इस प्रकार [illegible] हो तो जगत भय का कारण नहीं नन्दन वन है ऐसा अनुभव होगा । [illegible] का निरीक्षण करना है । पदार्थ को हटाना, मिटाना नहीं उसे [illegible] स्थान देना है । समय आयेगा, सब कुछ पूजित होगा, अतः मिटाना ही [illegible] को ।

*

देही व देह के स्वरूप को जानकर असंगता की प्राप्ति रूप शौच से निवृ[illegible] हो गई । तदुपरान्त आनन्द वारिधि में मीनवत् तादात्म्य, एक रूप हो[illegible] विलास करता सम्यक् स्नान है । प्रार्थना का विनियोग चिदानन्द में किया [illegible] शौच का, असंगता के ज्ञान का विनियोग किसमें ? आनन्द वारिधि में मीन[illegible] क्रीड़ा का आयोजन क्यों ?

मन चञ्चल है । क्या मीन कम चचल है ? उसका चाञ्चल्य जल क्री[illegible] में, सागर की गोद का आनन्द लेने में बाधा नहीं देता । हमें मन की चपलता [illegible] भय क्यों ? शिकायत क्यों ?

मीन की क्रीड़ा आनन्द मय है, सहज है । पर हाथी की जल क्री[illegible] भयान्वित, सतर्कता ग्रस्त है ।

शरण लहै जो जाहिकी ताको ताकी लाज ।
उलटे जल मछलो चलै, बह्यौ जात गजराज ॥

गजेन्द्र जल के बिना जी सकता है । मत्स्य का जीवन जल से भिन्न नहीं [illegible] उसका जन्म-स्थिति यहाँ तक कि मरण भो उसी जल को समर्पित है । यथा[illegible] में जल ही मत्स्य है । यहाँ किस सलिल की चर्चा है ?

"ज्ञानं दृक्दृश्ययोर्भानं, विज्ञानं दृश्य शून्यता" क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विचार में [illegible] की परि समाप्ति हो गई । इतने से कार्य नहीं बना । शरीर चिन्तन को त्याग [illegible] 'असंगोहं' का अनुभव जगा पर पवित्रता के लिये विज्ञान सलिल का स्पर्श कैसे [illegible] दृश्य को अदृश्य होने दें, शरीर को, क्षेत्र को विलोन कर दें । यह विज्ञान [illegible] प्रक्रिया है । माध्यम प्रेम ही होगा । जानने का आत्मोयता से संयोग होने प[illegible] आनन्द वारिधि को तरंग का, उसकी शीतलता का भान होने लगेगा । वारि[illegible] के अधिष्ठातृ देव वरुण हैं । वह वारक हैं, रसात्मा हैं, प्रेमदेव हैं ।

केवल शब्दों से उनका रूप न खिलेगा वह खिलेगा पूर्ण समर्पण से, प्रे[illegible] से, क्रोडा तभो सम्भव होगी । शक्कर कण रस रूप है अतः जल में घुलकर ए[illegible] हो जाता है । जगत आनन्दघन है । समन्वय कारी तत्व पर विचार करने [illegible]

[illegible] 'आनन्द' ही सिद्ध होगा । अनुभव जगत में घनीभूत प्रेमास्पदता के अतिरिक्त [illegible] क्या है ? विश्व के साथ प्रेम से एक हुआ जा सकता है, मिटाकर नहीं [illegible] स्नान है ।

* * *

पंचतरणी

[illegible]क्षिण में शेषनाग, उत्तर में अमरनाथ—सारे लोकों को सिर पर लिये [illegible] हैं ये, सारे लोकों से अतीत आसीन हैं ये—दोनों के बीच का यह स्थान ।

[illegible]ति उन्नत और तीक्ष्ण शिखरों का मुकुट पहने पर्वत वृत्ताकार पंक्ति में [illegible]मान हैं । वृत्त के केन्द्र में अनेक धाराओं में प्रवाहित नदी, जिसकी मुख्य [illegible] धाराएँ हैं । उनके तटवर्ती मैदान में कुछ श्वेत-पट-कुटी दृश्यमान हैं, [illegible] पक्के मकान भी । उनको मानवीय कृत्रिमता का कलंक क्षम्य है, क्योंकि [illegible] पीड़ित श्रांत यात्रियों का यही एक मात्र आश्रय है । वहाँ बैठे-बैठे इस [illegible]किक सौन्दर्य छटा का आस्वादन कर सकते हैं, दूकान वालों की प्रज्ज्वलित [illegible] का सेवन करते हुए, उनकी कथाओं से प्रेरणा लेकर अनायास ही क्षेत्र [illegible] का अनुसन्धान हो सकता है . . .

*

"विष्णु ने अनुरोध किया शंकर से—मुझे अपने तांडवनृत्य का दर्शन [illegible] । सहसा शंभु भी उठ खड़े हुए और डमरु का नाद प्रारम्भ कर नृत्य [illegible] । रसिक को रसमय दृष्टि में अपनी दृष्टि को मिलाते हुए नृत्य में [illegible] नटराज का जटा भार शिथिल हुआ । सुर सरिता को पाँच धाराएँ सरकती [illegible] भूतल पर उतर पड़ीं । नील गगन कलेवर नारायण प्रसन्न हुए, चारों ओर [illegible] शिखर विहँस उठे । महेश्वर भी सँभल गए । पर उस प्रसाद-प्रवाह की [illegible] हर' ध्वनि, समरस भाव को साक्षी बन आज भी गूँज रही है ।"

*

पंच = विस्तार; प्रायः संसार के अर्थ में प्रयुक्त है।
तरणी = पार होने का उपाय; मोक्ष का मार्ग।

मोक्ष को अपवर्ग कहते हैं, क्योंकि उसमें प-वर्ग नहीं है। प-वर्ग है-प्रपंच है। कैसे ?

प = प्रमाद, आत्म दृष्टि का तिरस्कार।
फ = फलेच्छा, जगत में भोग दृष्टि।
ब = बन्धन, भोगायतन तन से कर्म के द्वारा सम्बन्ध।
भ = भय, कर्म फल के नाश से त्रास
म = मोह, दुःख कारण में सुख बुद्धि, द्वैत वासना जन्य विपरीत

एक दूसरे से अंकुरित हो परस्पर बन्धन के द्वारा ये पाँचों द्वैत जाल बनते हैं। इसो को पार करना है। इन पाँचों को पार साधन भी पाँच प्रवाह हैं। यह पंचतरणी की विडंबना है!

*

काँटे को काँटे से निकालो। नदी को नदी से पार करो। मन को जीतो। देव को देव से देखो।

प-वर्ग होकर अपवर्ग देनेवाली महेश्वर की कृपामयी महेश्वरी पंचतरणी है।

'पार्वती-फणि-बालेन्दु-भस्म मन्दाकिनीयुता।
पवर्गरचितामूर्तिरपवर्गप्रदास्तु नः ॥

श्री शिव का दिव्य विग्रह वाम भाग में पार्वती, फणि (सर्प), का बाल चन्द्र, अंग राग सम भस्म और जटा-विभूषण मन्दाकिनी से युक्त है। ऐसी प-वर्ग रचित मूर्ति हमारे लिये अपवर्ग प्रदा ही सिद्ध होती है।

ब्रह्म की वही मुग्धमूर्ति ब्रह्माण्ड चक्र में भासित पर्वताकार होकर रही है..... । विष्णु बन कर दर्शन करें।

* * *

Samvit Sphulinga

WINTER 1976

Stand like a tree
Rooted in Earth's vitality.

Today's dry twigs will be
Tomorrow's tongues of flaming foliage.
Discover in this hour's austerity
Seeds of your unfolding beauty.

Let the touch of cold wind sear the leaves,
Only to release them to drift awhile,
Drop to the Mother's lap, be one with Her warmth,
And re-enter the root, the trunk, the shoot, the sky,
The endless celebration of soul-fertility.

* * *

Of the Earth

Found your spiritual practice on things of life and [illegible] thoughts borrowed from other minds. Take inspiration [illegible] earthly existence, bother not about ethereal intellectualit[illegible] See how a healthy sadhaka takes to life :

"I pass through the things which happen accordin[illegible] nature until I fall and rest, breathing out my breath [illegible] that element from which I daily draw it in and falling [illegible] that earth out of which my father collected his seed [illegible] my mother her blood and my nurse her milk; out of wh[illegible] for so many years I have been supplied with food and dri[illegible] which bears me when I tread on it and abuse it for my m[illegible] purposes."

*　*　*

Samvit Sadhaka

devotes time—not to any thing,
to just be a devotee;
takes things—not for values,
for the feel of taking;
developes values—not for display,
in sheer play;
plays very carefully—not to win,
but lose oneself.

[illegible]

Life is Samvit–spanda, a pulsation of the Divine. It is [illegible] in a ceaseless movement. Your role is to move [illegible] more and more meaningfulness and not make life [illegible]ingless.

Life is not a straight line, because it belongs to the [illegible] that abhors dreariness. To the unseeing soul life [illegible] circular, to those that seek light it is spiral. One is [illegible] tickler while the other is a lever. One is a past-time, [illegible] other is real progress.

The blind soul uses its worldly wisdom to forge its way [illegible] life but always ends by coming back to the same [illegible]. Hence a feeling of boredome, stagnation and [illegible]ment haunts this circular path. This is the state of the [illegible] ([illegible]), whether the soul is embodied as a blade of grass [illegible] a Brahman.

In the contrary, a soul yearning for light and freedom [illegible] each life impulse only to rise higher to vaster conscious[illegible] each experience comes to elevate, be it in depths of hell [illegible] heights of heaven. This is the path of the Lord (पशुपतिः).

If you wish to belong to this course, then break the [illegible] momentum that draws you on to the circuit of [illegible]ality. Avoid all that drags you into self-externalisation. [illegible] yourself at every step to the Divine power, still and [illegible] in the centre. It will hurl you on to the next higher [illegible] of life-change. There also be alert; keep the flame of [illegible] love awake and ready for next uplift, even if it comes [illegible] death, a hundred deaths. Always exercise intense purity

and sincerity. Rise and balance yourself on these two wings. The limitless vast of the Divine is yours—till you realise it you.

* * *

Primordial Parent

I worship mind as the seat of all knowledge,
I propitiate speech as the source of enlightenment.
May mind be established in speech and speech be
established in mind—to reveal the ever-revealed!
Mind is my father and speech my mother. Thoughts
and deeds issue from them—strong, pure,
divinely beautiful !

*

Mind is the great expanse of sky. Speech is the great earth that revolves in it.
Mind is the sun blazing from above. Speech is the fire kindling in the heart of earth.
Mind is envelopedin light. Speech is steeped in light.

*

Earth and sky meet to distil the waters of my life.
Sun and fire mingle to shed the moonshine of my joy.
Mind and speech merge to reveal the silence of
my endless being.

*

[illegible] मनसिप्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठित-मा विरावीर्म एधि ।
[illegible] पिता वाङ्माता प्राणः प्रजा ।

[illegible] विज्ञातं वाचस्तद्रूपम् । यत्किंच विज्ञास्यं मनसस्तद्रूपम् ।

*

[illegible] पृथिवीशरीरं ज्योतीरूपमयमग्निः
[illegible] द्यौः शरीरं ज्योतीरूपमसावादित्यः
[illegible] शरीरं ज्योतीरूपमासौ चन्द्रः
एते सर्व एव समाः सर्वेऽनन्ताः ॥

[illegible] Ayana

Samvit Satra was held at Bangalore as scheduled from [illegible] November to 14th December. It began with prayer [illegible] based on the 9th chapter of Sri Bhagavad Gita. [illegible] three morning sittings were devoted to the topic of [illegible]. Main part of the Satra consisted of lectures on the [illegible] chapter of Chhandogya upanishad, in which how a Samvit [illegible] can incorporate in his own day-to-day life the [illegible] evolution from *naama* to *bhoomaa* put forth by [illegible] Sanatkumara, was explained in detail.

The Satra concluded with a three-day celebration of Gita-jayanti in which the triple-yoga—Karma, Bhakti, Jnana—as enunciated in the Gita was studied. The 16th December 1975, the holy day of Vaikuntha Ekadasi when Gita-upadesa was delivered by Sri Krishan, was observed with mass recitation of the entire Gita in the morning. Sri Swamiji initiated it with a brief pooja of the Lord. An unexpectedly large number of sadhakas participated in what was perhaps unknown and hence unique to Bangalore. Set to suitably changing *ragas* and chanted in harmony, the four hours' recital created a thrillingly elevating atmosphere. The Satra concluded in the evening when the flower-bedecked hall was packed to maximum capacity and every one offered soulful homage to the Samvit ideal. Sri Swamiji brought out the significance of such Samvit gatherings and especially exhorted all sadhakas to take to Gita not as a book for study but as a self-built cottage, a wild terrain or a mountain, to live, to love, to enter into and adore.

Two sphuranas were also conducted by Sri Swamiji for a selected group of sadhakas of Bangalore, who have been meeting regularly every week at Sri Swamiji's suggestion for the past one year. In these twin sittings a new pattern was presented and the following items were recommended for incorporation in sphurana wherever it may be conducted.

(i) Simple Samvit questions to be asked on the spot and answered in writing in a limited short period; this is a Samvit "warm-up" (ii) A pre-determined topic is discussed by raising various issues of Samvit Sadhana connected with it (iii) Study of a standard Samvit work or items from the *Sphulinga* issues (iv) Bhajanas and Kirtans (v) Prayer and silence. Sri Swamiji laid a keen stress on the

usefulness and desirability of such sphuranas being conducted wherever there are two or more sadhakas.

From Bangalore, the scene of Satra shifted to Broach on the banks of holy Narmada. Sadhakas from all over Gujarat had gathered at the Jnana-Sadhana-Ashrama for the Satra programme which began with Rudra-abhishekam in the Ashrama Shrine and concluded with Trisathi Archana on Sri Chakra, both conducted by Sri Swamiji. That Gujarat had never witnessed such a form of worship. It was highly appreciated. Morning swadhyaya was of Isavasya Upanishad and in the evening-talks, the 7th chapter of Bhagavad Gita was taken up. Sri Swamiji visited many places and temples on the banks of Narmada travelling upto the holy spot where the immense river enters the sea—to see that the spiritual traditions of this ancient land still retain their pristine glory inspite of the confusing, conflicting and fluctuating phases of progress and degeneration seen all around.

*

From the Pousha Poornimaa Sri Swamiji will conduct Sphulinga Saptaha at Petlad (Gujarat). The Mahashivaratri will be celebrated at the Ashrama in Mount Abu on the 28th February.

Sadhakas will be glad to know that our latest publication "Portrait of Guru", being Sri Swamiji's lectures in English on the Maneeshaa Panchakam of Bhagawan Sri Sankaracharya, has been released. Copies can be had from all book-sellers or directly from the Sadhanayana.